हमारा काम है क्या, इसे जाने

पुल्तिजर पुरस्कार पाने वाली चीनी मूल की पत्रकार मी फांग ने अपनी पुस्तक-वन चाइल्ड, के सिलसिले में पत्रकारिता की भूमिका पर पूछे गये एक सवाल का जवाब देते हुए कहा कि अब पहले से ज्यादा जरूरी हो गया है कि हम यह जाने कि हमारा काम है क्या। पत्रकारिता सहज स्टेनोग्राफी नहीं है। यह सत्य बताने का काम है मी फांग ने अपने अनुभवों को बताते हुए यह भी कहा कि सच बताने में खतरे तो हैं पर आपको उनसे तरकीब से निकलना होगा। सच कैसे बदल रहा है, इस पर गार्डियन की सम्पादक कैथरीन का सोचना है कि यह समय है जब सोशल मीडिया ने खबर यानी घटना के सच को गटक लिया है। सबके अपने-अपने सच हैं ऐसे में कई बार परिणाम कुछ के कुछ हो जाते हैं। आर के विश्वविद्यालय के कुलपति रणजीत गोस्वामी भारत के संदर्भ में इसी बात को इस तरह से कहते हैं - सच के संबंध में हम बहुत पीछे हैं। शिक्षा हो या विकास, सच को जानना और बताना बहुत मुश्किल है। सच का पता ही नहीं चलता क्योंकि राजनीति का सच कुछ और ही होता है और उस सच के विरोध में जाना कठिन है।

हम, कभी-कभी लगता है, पत्रकारिता के संदर्भ में पीछे लौट रहे हैं। दुनिया भर में पत्रकारिता के संबंध में दो दृष्टिकोण रहे हैं। वाल्टर लिपमैन का नजरिया था कि पत्रकारिता सत्ता या उसी वर्ग के लोगों के विचारों को सरल ढंग से, सामान्य लोगों की समझ में आ जाने के लिए बताने का काम है। एक तरह से जो कहा गया है, बताया गया है, उसे ही कह देना। उसी समय के एक अन्य पत्रकार जान ड्यूबे का मत इससे भिन्न रहा है। वे कहते थे सत्ता या उस वर्ग के बड़े लोगों की बातों को लोगों के हितों के संदर्भ में समझ कर, उसकी विवेचना करके इस तरह से बताना चाहिये जिससे लोगों के लिए बेहतर और काम में आने वाली योजनायें बनाई जा सकें। वे लोगों के बीच विमर्श के पक्षधर थे। भारत में भी इसी तरह के दो मत आजादी के समय से ही रहे हैं। एक तरफ सरकार या प्रशासन जो कहता है, बताता है उसे ठीक ढंग से कह देना पत्रकारिता का ध्येय है। दूसरी तरफ कहा गया कि पत्रकारिता लोगों की तरफ से खड़े होकर जो हो रहा हैं उसकी व्याख्या करने का काम है। वह सरकार का प्रवक्ता नहीं हैं। वह लोगों को सच बताने का काम है। वह सेवा का एक उपाय है। उसे लोगों को समझाने, जागरुक करने और अपनी आकांक्षा का समाज बनाने के लिए समर्थ हस्तक्षेप कर सकने का उपाय है। एक तरह से पत्रकारिता का संबंध और उसका लक्ष्य लोग होना चाहिये।

अब यह छिपा नहीं रह गया है कि पत्रकारिता के माध्यम से क्या किया जा रहा है। यह भी बहुत साफ हो गया है कि तकनालाजी की वजह से जो जानकारियों या विचारों को फैलाने के अवसर और मंच तैयार हुए हैं, उनका उपयोग किसके लिए किया जा रहा है। उसमें सच कितना होता है और सच से गुमराह करने का उपाय कितना है। उसमें भी, लगता है कैथरीन ठीक ही कह रही हैं कि सबके अपने-अपने सच हैं और उनमें लोगों के हितों के सच को खंगालना कठिन होता

जा रहा है। अब भी लोगों को सच को ढूंढने के लिए जोखिम उठाना पड़ता हैं। अब भी कैमरे छीने और तोडे जोते हैं। मारपीट और डराना-धमकाना चलता है। यह भले ही तुर्की या उसी तरह के देशों की तरह न हो पर मौजूद तो है। लोभ और लाभ की वजह से भी सच को खंगालना कमजोर होता जा रहा है। पत्रकारों में भी एक तरह से इस बारे में विभाजन है और वे मानते हैं कि जो हो रहा है वह पहले से बहुत बेहतर और लोगों के हित में ही हो रहा हैं। उन लोगों की संख्या बढ़ रही है या बढ़ाई जा रही है जो सत्ता के चश्में से लोकहित को देखने को ही पत्रकारिता का पर्याय मानते हैं। पत्रकारिता एक मायने में स्टेनोग्राफी ही होती जा रही है। तब मी फांग को याद करते हुए यह तो सोचा ही जा सकता है कि हमको यह जानना चाहिये कि हमारा काम दरअसल है क्या। क्या हम सहज विस्तारक की भूमिका निभा रहे हैं या जो कुछ हो रहा है उसको लोगों के पक्ष में खडे होकर व्याख्या करने को अपना ध्येय मानते हैं।

दो सौ साल की पत्रकारिता को इस तरह की गुमराही या विपथी देखना, सचमुच ही तकलीफदेह तो होगा। तकलीफदेह इसलिए नहीं कि सच के लिए कुहासा है और हम सच को देख नहीं पा रहे हैं। यह कठिन इसलिए है कि हम सच को देखते हुए भी उसे सच की तरह पहचानने से बचने की कोशिश में अपने-अपने कारणों से हैं। सच को पहचानने का ऐसा अंतराल पत्रकारिता के विकास को किस तरह की श्रेणी में रच रहा है, देखें, समझें और पत्रकार की नजर से सोचें।

ooo